लगभग सात वर्ष पहले की बात है । दूरसंचार क्षेत्र में निजी कंपनियों को लाइसेन्स दिये हुए कुछ वर्ष हो चुके थे । किन्तु इन कंपनियों ने सरकार को लाइसेन्स शुल्क का नियमित भुगतान नहीं किया था और उनके ऊपर अरबों रुपया बकाया हो गया था । जब उनको नोटिस दिए जाने लगे , तो इन कंपनियों ने फरियाद की कि उनका धन्धा ठीक नहीं चल रहा है , उनका शुल्क कम किया जाये और बकाया शुल्क माफ किया जाये । तब भारत सरकार के दूरसंचार मन्त्री श्री जगमोहन , एक सख्त आदमी थे । उन्होंने निजी टेलीफोन कंपनियों की बात मानने से इन्कार कर दिया और बकाया शुल्क जमा नहीं करने पर लाइसेन्स रद्द करने की चेतावनी दी । उन्होंने कहा कि आपका धन्धा नहीं चल रहा है तो बन्द कर दो । लेकिन सरकार को पैसा तो देना पड़ेगा । तब ये कंपनियाँ मिलकर प्रधानमन्त्री कार्यालय में गयीं और वहाँ फरियाद की । प्रधानमन्त्री कार्यालय ने भी उनकी तरफदारी की , किंतु जगमोहन टस से मस नहीं हुए । नतीजा यह हुआ कि जगमोहन को दूरसंचार मन्त्रालय से हटा दिया गया , प्रमोद महाजन को दूरसंचार मन्त्री बनाया गया और निजी कंपनियों की लाइसेन्स शर्तों को बदलकर करीब **५००० करोड़ रुपये की राहत उनको दे दी गई । एक ईमानदार मन्त्री और निजी कंपनियों के बीच संघर्ष में जीत कंपनियों की हुई ।** इस खेल में कितना कमीशन किसको मिला होगा , इसका अंदाज आप लगा सकते हैं । निजीकरण , उदारीकरण , भूमंडलीकरण के नाम पर यही खेल पिछले डेढ़ दशक से चल रहा है ।

दूसरी ओर , ठीक इसी समय देश के कई हिस्सों में किसानों की आत्महत्याएं भी शुरू हो गयी थीं । खेती एक गहरे संकट में फंस चुकी थी , जिसके लिए स्वयं भूमंडलीकरण की नीतियाँ जिम्मेदार थीं । विश्व बैंक के निर्देश पर खाद , बीज , पानी , डीजल , बिजली आदि की कीमतें लगातार बढ़ाई जा रही हैं । विश्व व्यापार संगठन की नई खुली व्यवस्था के तहत खुले आयात के कारण किसानों की उपज के दाम या तो गिर रहे हैं या पर्याप्त नहीं बढ़ रहे हैं । किसानों पर भारी कर्जा हो गया है । देशी - विदेशी टेलीफोन कंपनियों को ५००० करोड़ रुपये की राहत देने वाली सरकार को यह ख्याल नहीं आया कि किसानों का करजा माफ कर दें या खाद - डीजल - बिजली सस्ता कर दें या समर्थन - मूल्य पर्याप्त बढ़ा दें । यदि कंपनियों का धन्धा नहीं चल रहा था , तो किसान की खेती में भी तो भारी घाटा हो रहा है ! लेकिन किसानों को , गरीबों को या आम जनता को राहत देना अब सर्कार के एज्ण्डे में नहीं है ।

देशप्रेम के स्थान पर विदेश प्रेम तथा आम जनता के स्थान पर कंपनियों के हितों को बढ़ाना - यही भूमंडलीकरण की नई व्यवस्था का मर्म है । इस अंधे विदेश प्रेम ने हमारे मंत्रियों , अधिकारियों , विशेषज्ञों और अर्थशास्त्रियों की सोचने की शक्ति को भी कुंद कर दिया है । पिछले पन्द्रह वर्षों से उन्होंने मान लिया है कि देश का विकास विदेशी पूंजी और विदेशी कंपनियों से ही होगा । विदेशी पूंजी को आकर्षित करने के लिए और खुश करने के लिए भारत की सरकारों ने पिछले पन्द्रह वर्षों

में सारी नीतियाँ और नियम-कानून बदल डाले। पिछले पन्द्रह वर्षों में हमारी संसद तथा विधानसभाओं ने कानूनों में जितने संशोधन किए हैं और नए कानून बनाए हैं , उनकी जाँच की जाए तो पता लगेगा कि ज्यादातर परिवर्तन विदेशी कंपनियों के हित में तथा विदेशी कंपनियों के कहने पर किए गए हैं। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष , विश्व बैंक , एशियाई विकास बैंक , विश्व व्यापार संगठन , अमरीका सरकार या बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कहने पर ये परिवर्तन किए जा रहे हैं। देश की जनता कोई मांग करती है तो सरकार को साँप सूँघ जाता है या या वह लाठी - गोली चलाने में संकोच नहीं करती है। लेकिन विदेशी कंपनियों की मांगें वह एक - एक करके पूरी करती जा रही है।

गौरतलब है कि जिस विदेशी पूँजी को लाने और खुश करने के लिए नीतियों-कानूनों में ये सारे परिवर्तन किए जा रहे हैं और जिस पर ही सरकार की , योजना आयोग की , सारी आशाएं केन्द्रित हैं,वह विदेशी पूंजी अभी भी देश में बहुत मात्रा में नहीं आ रह है। उसकी मात्रा धीरे-धीरी बढ़ी है ,लेकिन पिछले पांच वर्षों का भी औसत लें , तो भारत के कुल घरेलू पूंजी निर्माण में उसका हिस्सा ४-५ प्रतिशत से ज्यादा नहीं हो पाया है। मात्र ४-५ प्रतिशत पूंजी के लिए हम अपनी सारी नीतिय्यँ कानून बदल रहे हैं और देश को विदेशियों के कहने पर चला रहे हैम , क्या यह उचित है? यह सवाल पूछने का सम्य आ गया है।

उड़न-छू विदेशी पूंजी

सीमित मात्रा में जो विदेशी पूंजी आ रही है , उसका भी कोई विशेष लाभ देश को नहीं मिल रहा है। विदेशी पूंजी निवेश को दो हिस्सों में बाँटा जा सकता है - पोर्टफोलियो निवेश और प्रत्यक्ष निवेश (FDI)। विदेशी पूंजी का लगभग आधा हिस्सा पोर्टफोलियो निवेश के रूप में आ रहा है,अर्थात यह हमारे शेयर बाजार में शेयरों की खरीद-फरोख्त करने और सेयरों की सट्टेबाजी से कमाई करने आती है। अभी जब सेन्सेक्स दस हजार से ऊपर पहुंचता है,वह इसीका कमाल है। इस प्रकार,यह पूंजी तो सही अर्थों में देश के अन्दर आती ही नहीं है। इससे देश में कोई नया रोजगार नहीं मिलता या नई आर्थिक उत्पादक गतिवि्धि चालू नहीं होती है। बल्कि , शेयर बाजार में आई यह विदेशी पूंजी बहुत चंचल और अस्थिर होती है। यह कभी भी वापस जा सकती है और पूरी अर्थव्यवस्था को संकट में डाल सकती है। इसे ‘ उड़न-छू पूंजी ‘ भी कहा जाता है। दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों में कुछ वर्ष पहले जो संकट आया था,उसमें इसी विदेशी पूंजी के भागने तथा अल्पकालीन विदेशी ऋणों के प्रवाह के बंदे हो जाने का बड़ा योगदान था। इस संकट के पहले इंडोनेशिया , थाईलैण्ड , मलेशिया , फिलीप्पीन , दक्षिण कोरिया आदि देश विश्व बैंक की सफलता के प्रिय उदाहरन थे और इन्हें ‘एशियाई शेर ‘ कहा जाने लगा था। लेकिन विदेशी पूं जी के पलायन ने इन शेरों को अचानक

गीदड़ों में बदल दिया । दूसरे देशों के अनुभव से भी हमारे शासक सीखते नहीं हैं , यह एक विडंबना है ।

विदेशी कंपनियों का हड़पो अभियान

गतांक से आगे : दूसरे प्रकार की विदेशी पूंजी-प्रत्यक्ष विदेशी निवेश- वास्तव में देश के अन्दर आती है । इसे दो भागों में बांटा जा सकता है - (एक) विलय और अधिग्रहण (Merger & Acquisition) तथा (दो) हरित निवेश (Greenfield investment) । भारत में प्रत्यक्ष पूंजी निवेश का लगभग आधा हिस्सा तो दूसरी कंपनियों के विलय और अधिग्रहण में लग रहा है । अर्थात विदेशी कंपनियां कोई नया कारखाना या नया करोबार शुरु करने के बजाय पहले से चली आ रही देशी कंपनी के कारोबार को खरीद लेती हैं । इससे भी देश में कोई नई उत्पादक गतिविधि नहीं शुरु होती है , रोजगार नहीं बढ़ता है , सिर्फ देश में पहले से चले आ रहे कारोबार के मालिक बदल जाते हैं और उसकी कमाई विदेश जाने लगती है । पारले कंपनी के शीतल पेय व्यवसाय को अमरीका की कोका कोला कंपनी द्वारा खरीदना , टाटा की टोमको कंपनी के साबुन ब्रान्डों तथा साबुन व्यवसाय को हिन्दुस्तान लीवर द्वारा खरीदना , फ्रांसीसी कंपनी लाफ़ार्ज द्वारा सीमेंट के अनेक कारखानों को खरीदना , इसके कुछ उदाहरण हैं। भारत के सरकारी उपक्रमों के शेयर खरीदकर उन पर अपना वर्चस्व कायम करने को भी इस श्रेणी में रखा जाएगा (जैसे मारुति कंपनी पर सुज़ुकी नामक जापानी कंपनी का कब्जा)। पूरी दुनिया में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के द्वारा विलय और अधिग्रहण की प्रवृत्ति जोरशोर से चल रही है । इससे बाजारों में चन्द बड़ी कंपनियों का एकाधिकारी वर्चस्व कायम हो रहा है । भारत के विभिन्न वस्तुओं के कारोबार में भी विदेशी कंपनियों का कब्जा तेजी से हुआ है । उदारीकरण के इस दौर में विलय , अधिग्रहण अवं एकाधिकार पर पाबन्दियाँ हटाने के बाद यह संभव हुआ है । इसके लिए ‘ एकाधिकार एवं प्रतिबन्धित व्यापार पद्धतियाँ अधिनियम (MRTP Act) को बदला गया है । इस प्रकार , विदेशी पूंजी के आने से प्रतिस्पर्धा का भी लाभ देश को नहीं मिला है , जिसका बहुत गुणगान किया जा रहा था । बल्कि कई क्षेत्रों में एकाधिकारी प्रवृत्तियाँ मजबूत हुई हैं ।

इस प्रकार जिस हरित निवेश से ही देश में उत्पादन , आय और रोजगार बढ़ने की कुछ उम्मीद की जा सकती है , वह देश में आ रही पूंजी का मात्र एक-चौथाई है । इसके बल पर भारत के शासक कैसे देश के विकास की उम्मीद कर रहे हैं , यह एक हैरानी का विषय है । इसे अंधविश्वास या अंधश्रद्धा ही कहा जा सकता है । महाराष्ट्र के प्रगतिशील समूहों ने अंधश्रद्धा निर्मूलन का काम काफी लगन से किया है । अब उन्हें भूमण्डलीकरण की इन अंधश्रद्धाओं के निर्मूलन का भी बीड़ा उठाना चाहिए ।

पूरा देश विदेशी कंपनियों के हवाले

इसी प्रकार , निजीकरण की नीति पर भी भारत सरकार तथा हमारी राज्य सरकारें अंधे की तरह चल रही हैं । यूरोप के कई देशों में जितना निजीकरण नहीं हुआ, उससे ज्यादा ज्यादा निजीकरण भारत में हो चुका है । विदेशी कंपनियों के लिए जिस तरह से दरवाजे खोले गए हैं और पूरी छूट दे दी गई है, उस स्थिति में निजीकरण का मतलब विदेशीकरण ही है । अर्थात देर-सबेर विदेशी कंपनियों का वर्चस्व यहाँ कायम हो जाएगा। देश के उद्योग , खेती , खदानें , बैंक , बीमा , शेयर बाजार , बिजली ,हवाई अड्डे , सड़कें , होटल , भवन निर्माण , मीडिया , शिक्षा , चिकित्सा , टेलीफोन , कानूनी सेवाएं , आडिट , पानी व्यवसाय - सबको विदेशियों के लिए खोला जा रहा है और उन्हे दावत दी जा रही है । एक ईस्ट इण्डिया कंपनी के कारण भारत को २०० वर्षों की गुलामी और बरबादी झेलनी पड़ी थी । अब हजारों विदेशी कंपनियाँ देश में पैर जमा रही हैं , तब देश का भविष्य क्या होगा , इसकी चिन्ता सरकार में किसी को नहीं है । विदेशी कंपनियों को प्रवेश देने का सरकार का सबसे ताजा पैकेज खुदरा व्यापार के क्षेत्र में है । यह एक प्रकार से भारत में बढ़ती बेरोजगारी की स्थिति में अंतिम शरणस्थली है । जब कोई और रोजगार नहीं मिला , तो माँ-बाप बेटे के लिए दुकान खोल देते हैं । लेकिन अब वहाँ भी विदेशी कंपनियों का हमला शुरु हो जाएगा ।

जिसे विनिवेश (disinvestment) कहा जा रहा है , उसका भी औचित्य संदेहास्पद है। भारत सरकार हर बजट में सरकारी उद्यमों को बेचने के लक्ष्य रखती है और तेजी से उनको बेचती जा रही है । सरकार का यह काम वैसा ही है , **जैसे कोई बिगड़ा हुआ , आवारा , कामचोर बेटा स्वयं कुछ कमाने के बजाय बाप-दादे की कमाइ हुई संपत्ति को बेचता जाए ।** भारत सरकार ठीक वही कर रही है । इससे बड़ी वित्तीय गैर जिम्मेदारी और क्या हो सकती है , क्योंकि यह संपदा एक न एक दिन तो खतम हो ही जाएगी ? विश्व बैंक के निर्देश पर वित्तीय अनुशासन के लिए भारत सरकार ने ‘वित्तीय जिम्मेदारी एवं बजट प्रबंधन अधिनियम ‘ तो पारित किया है , लेकिन उसमें इसे वित्तीय गैर-जिम्मेदारी नहीं माना गया है । उसका मतलब तो सिर्फ गरीबों और आम जनता की भलाई के लिए किए जाने वाले खर्चों में कटौती करते जाना है ।

पहले सरकार ने कहा कि जिन सरकारी उपक्रमों में हानि हो रही है , उन्हें बेचा जाएगा । हानि क्यों हो रही है , उसे कैसे दूर किया जा सकता है , यह विचार तथा कोशिश करने की जरूरत सरकार ने नहीं समझी । कई मामलों में तो स्वयं सरकार या उच्च पदस्थ अफसरों के निर्णयों , नीतियों और लापरवाही के कारण ये हानियाँ हुईं और बढ़ीं । लेकिन अब तो हानि की बात एक तरफ रह गयी है ।सरकार उन सरकारी उद्यमों को बेच रही है, जो मुनाफे में चल रहे हैं । इसका कारण भी स्पष्ट है । देशी-विदेशी कंपनियां उन उपक्रमों को आखिर क्यों खरीदेंगे , जो घाटे में चल रहे हैं ?

इसलिए बजट के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए अब लाभ वाले सरकारी उपक्रमों को बेचा जा रहा है । अब तो ‘नवरत्नों’ की बारी भी आ गयी है।

निजीकरण-उदारीकरण के घोटाले

निजीकरण के पीछे एक और दलील थी कि सरकारी काम में काफी भ्रष्टाचार है । लेकिन जिस तरीके से निजीकरण और उदारीकरण हो रहा है , उसने तो भ्रष्टाचार की सारी मर्यादाएं तोड़ दी हैं ।पिछले कुछ सालों में इतने घोटाले हुए हैं और इतने बड़े घोटाले हुए हैं कि ‘घोटाला’ शब्द के मायने बदल गये हैं। पहले दो-चार लाख रुपए का गबन होता था तो अखबारों के मुखपृष्ठ पर बड़ी खबर बनता था । लेकिन अब करोड़ों ही नहीं , अरबों-खरबों रुपयों के घोटाले होते हैं। इन घोटालों में विदेशी कंपनियाँ बढ़-चढ़ कर भाग लेती हैं। इस देश को लूटने में वे पूरी तरह शामिल हैं ।

उदारीकरण-वैश्वीकरण के इस दौर का पहला बड़ा घोटाला शेयर घोटाला था , जिसमें हर्षद मेहता-हितेन दलाल-भूपेन दलाल जैसों का हाथ था । लगभग १०,००० करोड़ रुपए के इस घोटाले की जाँच संयुक्त संसदीय समिति ने की थी । इस समिति की रिपोर्ट में बताया गया कि घोटाले में सबसे अग्रणी चार विदेशी बैंक थे - स्टेनचार्ट बैंक , ए एन्ड ज़ेड ग्रिन्ड्लेज़ बैंक , सिटी बैंक और बैंक ओफ़ अमेरिका । इनके खिलाफ़ कड़ी कार्रवाई करने की सिफ़ारिश इस समिति ने की थी । लेकिन भारत सरकार ने कुछ विशेष नहीं किया । न उनके लाइसेन्स रद्द किए , न उन पर जुर्माना किया , न उनको भारत छोड़ने को कहा। बल्कि विदेशी बैंकों को और ज्यादा प्रवेश व छूट दी । हमारे देश में , हमारी भूमि पर आकर , विदेशी बैंक घोटाले करें तथा करवाएं और उन पर कार्रवाई न हो - यह सिर्फ हमारे देश में ही सम्भव है। वैश्वीकरण ने हमारे स्वाभीमान को तथा देशहित को कितना गिराया है तथा गुलामी को कितना मजबूत किया है , उसका यह एक और उदाहरण है ।

देश की अस्मिता ,गरिमा तथा हितों के खिलाफ ऐसा ही एक घोटाला मारिशस रूट से हुआ । भारत और मारिशस के बीच एक संधि है , जिसमें एक दूसरे की कंपनियों पर दोहरा करारोपण नहीं करने का समझौता हुआ है । इसका अनुचित लाभ उठाने के लिए , भारत के शेयर बाजार में पूंजी लगाने वाली कई विदेशी कंपनियों ने अपना फर्जी रजिस्ट्रेशन मारिशस में करवा लिया तथा अरबों रुपयों का पूंजी लाभ कर की चोरी द्वारा कमाया।कुछ वर्ष पहले भारत सरकार के आयकर विभाग के कुछ ईमानदार अफसरों ने इन कंपनियों की जाँच शुरु की तो हडकंप मच गया । विदेशी कंपनियों ने धमकी दी कि यदि उनके खिलाफ जाँच नहीं रोकी गयी तो वे अपनी पूंजी वापस ले जाएंगे । शेयर बाजार का सूचकांक नीचे जाने लगा। तब वित्त मन्त्रालय ने हस्तक्षेप किया और आयकर अधिकारियों को आदेश दिया गया कि वे यह जाँच बन्द कर दें ।स्पष्ट है कि भारत सरकार पूरी तरह

विदेशी पूंजी और विदेशी कंपनियों की बंधक बन गई है तथा कर चोरी और घोटालों को भी अनदेखा करते हुए उन्हें खुश रखना चाहती है।

सेन्टूर हो्टल बिक्री , माडर्न फूड इंडस्ट्रीज की बिक्री,बाल्को की बिक्री जैसे कई मामले हैं,जिनमें घोटालों की गूँज उठी है । महाराष्ट्र में अमरीकी कंपनी एनरोन के बिजली कारखाने के लिए बिना निविदा के जो समझौता हुआ,उसका घोटाला तो काफ़ी चर्चित रहा है । मध्यप्रदेश में सड़कों के निजीकरण का उदाहरण भी काफ़ी मौजू है । म.प्र. सरकार ने ने बी.ओ.टी. (Bulid-Operate-Transfer) योजना के तहत १५ सड़कों का ठेका निजी कंपनियों को देने का फैसला किया। एशियाई विकास बैंक के कर्ज से बनी इस योजना मेम प्रत्येक सड़क के लिए ५० से ६० प्रतिशत अनुदान सरकार ने दिया ।मान लीजिए,एक सड़क की लागत १०० करोड़ आंकी गई है और उसमें ५५ करोड़ का अनुदान है। लेकिन निश्चित रूप से सड़क की वास्तविक लागत बहुत कम होगी,तथा १०० करोड़ की लागत बढ़ा-चढ़ा कर बताई होगी । यदि वास्तविक लागत ८० करोड़ रु. है,तो उस कंपनी को मात्र २५ करोड़ रुपए ही अपने पास से लगाने होगा ।लेकिन टोल टैक्स की वसूली तो वह पूरी करेगी । याने पैसा सरकार का , कमाई कंपनियों की- निजीकरण का मतलब यही है । म.प्र. की सड़कों कि इस बन्दरबाँट में भी विदेशी कंपनियां पीछे नही रही हैं ।इसी तरह टेलीफोन का ढांचा गांव - गांव तक पहुंचाने का काम सरकारी विभाग ने किया और उस पर काफी सार्वजनिक पैसे का विशाल निवेश हुआ । लेकिन जब टेलीफोन से कमाई का समय आया, यो निजी देशी-विदेशी कंपनियाँ मैदान में आ गयीं ।

देश हित से ऊपर विदेशी पूंजी

विदेशी पूंजी का मोह इतना ज्यादा है कि देश हित , जन स्वास्थ्य , पर्यावरण सबको धता बताई जा रही है । शीतल पेय की कोका कोला - पेप्सी कंपनी की बोतलें नुकसानदायक हैं , यह प्रमाणित हो चुका है । फिर भी उन्हें प्रतिबन्धित करने की हिम्मत भारत सरकार की नही है ।और बोतलबंद पानी का धन्धा तो इन कंपनियों की लूट का बढ़िया उदाहरण है। पाँच पैसे का पानी , पचास पैसे की पैकिंग और दाम दस रुपए !इससे ज्यादा मुनाफा और लूट का धन्धा और क्या होगा ?

बीमा और बैंकिंग क्षेत्र में विदेशी कंपनियों को प्रवेश देना भी देशहित के खिलाफ़ है । विदेशी बैंक और विदेशी बीमा कंपनियाँ शुरु में थोड़ी पूंजी विदेश से लाएंगे। लेकिन फिर जमा राशि और प्रीमियम राशि तो इस देश की जनता से ही इकट्ठा करेंगे और उससे अपना धन्धा करेंगे । बचत भारतीय जनता की , पूंजी इस देश की , और उससे कमाई विदेशियों की - यह तो लूट है। इसकी इजाजत हम क्यों दे रहे हैं ?

विदेशी पूंजी और निर्यात के पागलपन में ही 'पोस्को' जैसे समझौते हो रहे हैं । यह गर्व से बताया जा रहा है कि दुनिया का सबसे बड़ा इस्पात कारखाना भारत में लगेगा और भारत में अब तक का सबसे बड़ा पूंजी निवेश होगा । किंतु कारखाने के लिए जितना लोहा लगेगा , उससे काफी ज्यादा कच्चा लोहा निर्यात करने की अनुमति इस विदेशी कंपनी को दे दी गयी है । यह कहाँ की बुद्धिमानी है ? कच्चा लोहा निर्यात करने के बजाय इस्पात निर्यात करते तो भारत के लोगों को रोजगार मिलता । फिर पोस्को जैसे दो-चार सौदे और हो गए, तो भारत का लौह खनिज भण्डार १०० साल चलने वाला था , वह ५० साल में ही खतम हो जाएगा । भारत की अपनी विकास की जरूरतों का कोई विचार नहीं किया गया ।

विदेशी पूंजी और विदेशी कंपनियों के पक्ष में एक और दलील है कि इनके आने से भारत का निर्यात बढ़ाने में मदद मिलेगी। पिछले कुछ समय से , चीन की नकल पर , भारत सरकार ने ' विशेष आर्थिक क्षेत्र ' (SEZ) बनाना शुरु कर दिए हैं और और उनके लिए एक कानून भी संसद मे पारित किया है । ये विशेष ज़ोन होंगे तो भारत की भूमि पर,किंतु उन पर भारत के कानून लागू नहीं होंगे । इन ज़ोनों में स्थित देशी-विदेशी कंपनियों पर आयकर,सीमाशुल्क आदि नहीं लगेंगे । जमीन मुफ़्त या रियायती दरों पर मिलेगी । भारत के श्रम-कानूनों से भी आगे चल कर इन्हें मुक्त कर दिया जाएगा । भारत के वाणिज्य मन्त्री का कहना है कि इससे विदेशी कंपनियाँ भारत की ओर आकर्षित होंगी तथा भारत के निर्यात काफ़ी बढ़ेंगे। लेकिन क्या ये ज़ोन भारत की सम्प्रभुता के खिलाफ़ नहीं हैं ?

फिर,विदेशी पूंजी आने से भारत के निर्यात-आयात मोर्चे पर कोई फायदा नहीं दिखाई दे रहा है । भारत के निर्यात जरूर बढ़े हैं,लेकिन आयातों में उनसे ज्यादा बढोतरी हुई है।नतीजा यह है कि भारत के विदेश व्यापार में लगाता घाटा हो रहा है ।

निर्यात या शोषण का जरिया ?

लेकिन इससे ज्यादा बुनियादी सवाल यह है कि निर्यात बढ़ाने पर इतना ज्यादा जोर उचित है क्या ? अपनी विशाल आबादी की जरूरतों की उपेक्षा करके विदेशियों के लिए उत्पादन करना क्या विवेक सम्मत है ? 'निर्यातोन्मुखी विकास' का विश्व बैंक का दिया हुआ सूत्र कहीं धोखा तो नहीं है ?

विश्व बैंक और नव-उदारवादी अर्थशास्त्री दुनिया के सारे गरीब देशों को इसी 'निर्यातोन्मुखी विकास' का पाठ पढ़ा रहे हैं। लेकिन जिसे राह चलता अनपढ़ आदमी भी समझ सकता है , उस तथ्य को हमारे शासक और नीति-निर्माता नहीं समझ रहे हैं कि आखिर सारे देशों में के निर्यात एक साथ कैसे बढ़ सकते हैं? जब सारे गरीब देश एक साथ निर्यात बढाने की कोशिश करेंगे तो दुनिया

के बाजार में गलाकाट प्रतिस्पर्धा जन्म लेगी और वे एक-दूसरे के बाजार पर कब्जा करने की कोशिश करेंगे तथा अपनी निर्यात-वस्तुओं की कीमतें गिरांएगे। दूसरे शब्दों में,व्यापार की शर्तें उनके प्रतिकूल होती जाएंगी। आज यही हो रहा है।

जब बाजार में कीमतें कम होती हैं,तो उसका फायदा उसे मिलता है,जिसके पास खरीदने की ताकत हो,पैसा हो । अंतर्राष्ट्रीय बाजार के संदर्भ में कहें, तो जिसके पास डॉलर हो।गरीब देशों की निर्यात-प्रतिस्पर्धा का लाभ यूरोप-अमरीका को सस्ती चीजें मिलने में हो रहा है।चूंकि डॉलर अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा है,अमरीका के लिए तो मौज हो गई है । बहुराष्ट्रीय पूंजी के जरिए पूरी दुनिया अमरीका की सेवा में लगी है। कहीं से उनके लिए पेट्रोल आ रहा है,कहीं से इस्पात-एल्यूमिनियम-तांबा ।कहीं से मांस,कहीं से केला,कहीं से कपड़ा,कहीं से जूता,कहीं से चाय-काफी,कहीं से शक्कर,कहीं से कालीन,कहीं से आभूषण,कहीं से डॉक्टर,कहीं से इन्जीनियर उनके लिए आ रहे हैं। अमरीकियों का जीवन-स्तर सबसे ऊपर इसी तरीके से बनाये रखा गया है ।यह तथ्य भी बहुत कम प्रचारित होता है संयुक्त राज्य अमरीका का विदेश व्यापार का घटा दुनिया में सबसे ज्यादा है (अर्थात वह निर्यात कम करता है,आयात काफ़ी ज्यादा करता है) और उस पर विदेशी कर्ज भी दुनिया में सबसे ज्यादा है। भारत सहित गरीब देशों की सरकारों को उपदेश देने वाला अमरीका स्वयं जबरदस्त ढंग से ‘ ऋणम कृत्वा,घृतम पिबेत’ के दर्शन पर चल रहा है ।

<u>डॉलर -रुपये की लूट</u>

अंतर्राष्ट्रीय विनिमय में अमरीका जैसे देश एक और तरीके से भारत जैसे देशों को लूट रहे हैं । वह है डॉलर और रुपए का विनिमय दर । बीस साल पहले एक डॉलर आठ-दस रुपये का था , आज वह ४८ रुपये का हो गया है। लेकिन क्रयशक्ति समता (Purchasing Power Parity) के हिसाब से देखें , अर्थात वस्तुओं और सेवाओं को खरीदने की क्षमता से तुलना करें , तो एक डॉलर आज भी दस रुपये से ज्यादा का नहीं होना चाहिए । इस अत्यधिक गैरबराबर विनिमय दर का मतलब है कि हम अपने आयातों का पांच गुना ज्यादा भुगतान कर रहे हैं। यह जबरदस्त लूट और शोषण है ।

अब बात साफ हो जानी चाहिए । इस जबरदस्त लूट और शोषण को सुविधाजनक बनाने और बढ़ाने के लिए ही अमरीका व दुनिया के अन्य अमीर देश मुक्त व्यापार की हिमायत करते हैं और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाने की वकालत करते हैं । विश्व व्यापार संगठन भी इसीलिए बनाया गया है तथा मुक्त व्यापार के क्षेत्रीय समझौते भी इसीलिए किए जा रहे हैं । दरअसल वैश्वीकरण की यह व्यवस्था नव-औपनिवेशिक शोषण और साम्राज्यवादी लूट का ही नया रूप है,नया औजार है । जैसे विदेशी पूंजी से भारत के विकास की बात वास्तविकता से परे एक अन्धविश्वास है , वैसे ही मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय ढांचे में निर्यातों से देश के विकास को गति मिलेगी,यह भी एक और अन्धविश्वास है ।

इन्हीं आर्थिक अंधविश्वासों के चलते आज भारत की अर्थव्यवस्था एक गहरे संकट में फंस गयी है । भले ही ऊपर बैठे शासक और अर्थशास्त्री ८ प्रतिशत विकास दर की खुशियाँ मनाते रहें , लेकिन देश की विशाल आबादी जबरदस्त बेरोजगारी,कंगाली,कुपोषण और अभावों से जूझ रही है । किसान , बुनकर , कारीगर और छोटे व्यापारी हजारों की संख्या में आत्महत्या कर रहे हैं । पिछले पन्द्रह वर्षों में देश के पांच लाख छोटे-बड़े उद्योग बंद हो चुके हैं । जिस तरह का औद्योगिक विनाश (de-industrialisation) डेढ़ सौ वर्ष पहले अंग्रेजों के राज में भारत में हुआ था , उसी तरह का औद्योगिक विनाश बड़े पैमाने पर एक बार फिर आजाद भारत में हो रहा है । तब खेती पर निर्भर आबादी बढ़ गयी थी , अब तथाकथित ‘ सेवाओं’ का हिस्सा बढ़ रहा है । लेकिन खेती , पशुपालन , उद्योग , खदानें , आदि में ही वास्तविक उत्पादन एवं आय सृजन होता है । एक सीमा के बाद सेवा क्षेत्र की वृद्धि भी इन पर निर्भर रहती है ।यदि खेती-उद्योग का विनाश होता है तो मात्र ’ सेवाओं ‘ के दम पर कोई भी अर्थव्यवस्था नहीं चल पाएगी । पूरा देश एक बार फिर बरबादी ,कंगाली और गुलामी की राह पर है ।

देश बचेगा , तो हम बचेंगे

जैसे पुत्रमोह में धृतराष्ट्र अन्धे हो गए थे और सच्चाई व न्याय को नहीं देख पा रहे थे तथा न ही अवश्यंभावी कलह तथा विनाश को देख पाये , वैसे ही आज के शासक भी वैश्वीकरण की चकाचौंध में देश के ऊपर आसन्न संकट को देख नहीं पा रहे हैं। यदि इसे नहीं रोका गया, तो पौराणिक ‘महाभारत’ से ज्यादा बड़ी विनाशलीला होगी । ऐसे भारत का भविष्य अंधकारमय है । और यदि भारत का कोई भविष्य नहीं होगा,तो बी.एस.एन.एल का भी कोई भविष्य नहीं होगा। आज बी.एस.एन.एल. के ऊपर जो संकट आ रहा है, वह वैश्वीकरण की विनाशकारी प्रक्रिया का हिस्सा है । बी.एस.एन.एल. का भविष्य अनिवार्य रूप से देश के भविष्य से जुड़ा है ।

ऐसी हालत में , हम सबको मिलकर देश को बचाने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा । लेकिन यह लड़ाई बी.एस.एन.एल. के कर्मचारी अकेले नहीं लड़ पाएंगे। इसके लिए उन्हें सार्वजनिक क्षेत्र के अन्य कर्मचारियों , किसानों, मजदूरों , बुनकरों,मछुआरों , आदिवासियों ,दलितों आदि के साथ एकता बनाना पड़ेगा। मरा आपसे अनुरोध है कि पगार तथा बोनस की लड़ाई छोड़ें।वे तो छोटी बातें हैं। इस बड़ी लड़ाई के लिए तैयार हो जाएं । तभी देश बचेगा और तभी बी.एस.एन.एल भी बचेगा ।

~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~
~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(नेशनल फेडरेशन ओफ़ टेलिकोम एम्प्लाईज़,बी.एस.एन.एल औरंगाबाद जिला शाखा,महाराष्ट्र द्वारा विदेशी पूंजी और बी.एस.एन.एल. का भविष्य पर आयोजित परिसंवाद में सुनील,राष्ट्रीय महामन्त्री,समाजवादी जनपरिषद का भाषण, दिनांक १० फरवरी २००६)